Introduction

:: प्राक्कथन ::

अनंत आकाश , अनंत और अनगिनत तारे , उन तारों में एक छोटा-सा , अदना-सा तारा सूर्य और उसका एक छोटा-सा ग्रह पृथ्वी । अभी तो हमारा खगोल यहां तक सीमित है । पर सितारों के आगे जहां और भी हैं । ताहम इतने बड़े अनंत विश्व में हमारा अस्तित्व ? नगण्य भी है , महत्त्वपूर्ण भी है । व्यर्थ भी है , काम का भी है । दुःखमय भी है , आनंदमय भी । यदि उसके कतृत्व को लेकर चलें , कर्तापन के अहंकार को लेकर चलें , तो पहली वाली स्थिति होगी ; परंतु यदि उसकी सहज स्थिति को लें , "च्वोइसलेस" आनंदमयी स्थिति को लें , तो हम दूसरे अनुभव के हकदार होंगे । आंधी में स्वयं को , "सेल्फ" को तिनके की तरह छोड़ देना , अपने अस्तित्व की कश्ती को क्षिप्रगामी दरिया में रख देना । अनंत समुद्र की , पारावार की एक छरहरी बूंद , चेतना-सागर की एक लहर , विश्व क्षितिपुंज की एक छोटी-सी रज , स्नेह-वर्षा से भींगी-भींगी ।

जब सोचता हूं जीवन के विषय में , तो मेरे गुरु के चैतन्य से , स्फुरणा से , अनुकंपा से कुछ ऐसे ही अमूर्त बिंब बनने लगते हैं । वस्तुतः "सोचना" शब्द का गलत प्रयोग हुआ , क्योंकि यहां तो "थोटफुलनेस" से "थोटलेस" की ओर गति करना है । सोचना प्रवीण पंडया का काम है , प्रबुद्ध चैतन्य का नहीं , जो पत्तों की पाजेब को सुनता है , जिसे प्रतीक्षा है अमृत के की बूंदों के गिरने की । जो कहता है —

> बुझा दो दीप सारे अर्चना के , अकेले प्राण की बाती जलेगी —
> जला दो अस्मिता की वंचना को, कपूरी-ज्योति की प्रतिमा ढलेगी

एक [illegible] सौन्दर्यमय अनुभव से गुजरना ही जिसके लिए अस्तित्व की पहचान है —

> " हजारों फूल घाटी में खिले हैं ,
> लगा है रूप-सौरभ रंगमेला । "
> मगर उस भीड़ में भी एक कोई शिखर पर शांत बैठा है अकेला ।।

यह सब मैं इसलिए कह रहा हूं कि चेतना का यह आनंद अमूर्त है , गूंगे की शर्करा । क्या कोई उसे पकड़ सका है ? क्या कोई हवा में गांठें बना सका है ? जो सुन्दर है , वह तो अनुभव है , क्रोचे के शब्दों में वही अभिव्यंजना है । जब उसे रंग , ध्वनि , घाट देते हैं तब फिर वह अनुभव , वह अभिव्यंजना कहां रहती है ?

ऐसा ही है , ओशो को लेकर सोचना । ओशो को लेकर सोचा ही नहीं जा सकता । उसके साथ चल सकते हैं , बह सकते हैं , उड़ सकते हैं । और ओशो पर शोध ? यह तो और भी बामुश्किल , बामशक्कत, बामुरव्वत काम । फिर भी यह मूर्खता इसलिए कि कुछ लोग अपने ज्ञान के घमण्ड में , अक्ल की ऐंठ में , बिना ओशो को पढ़े ही , बिना सुने ही , एकतरफा डिक्री दे रहे हैं — रजनीश ऐसे हैं , रजनीश वैसे हैं , रजनीश सेक्स-मैनियाक हैं , अहंकारी हैं , कोरे तार्किक हैं , विलासी हैं और न जाने क्या-क्या हैं । और यह सब बिना पढ़े ,

बिना सुने, कर्णोपकर्ण। पर इधर ओशो रजनीश को लेकर एक बाढ़-सी आ रही है। सहमति के सुर उठ रहे हैं। और लोग समझ रहे हैं कि ओशो अपने युग से कितने आगे हैं। मेरा यह प्रयास भी उसी दिशा को समर्पित है।

कहते हैं कि शाहजहां की प्रेयसी पत्नी का एक और दीवाना था। एक पागल शिल्पकार। बना-बना के मूर्तियां तोड़ता था। ओशो ने भी यही किया है। उस अनाम निराकार के प्यार में पागल ओशो ने भी कई मूर्तियों को तोड़ा है। पर एक फरक है, और बड़ा फरक है, कि वह कलाकार मूर्तियों को इसलिए तोड़ता था कि न चाहते हुए भी उसमें मुमताज़ के अक्श आ जाते थे, जबकि ओशो इसलिए तोड़ते हैं कि वह अमूर्त, वह निराकार, आकार की कैद में नहीं आ पाता। वह छलिया चेतना के स्तरों को छू-छूकर चला जाता है। इसलिए वह भी उपनिषदों की भांति "नेति-नेति" करके कल्पना की मूर्तियों को तोड़ता है।

प्राक्कथन कार्य-समाप्ति के पश्चात् लिखा जाता है, पर उसे रखा जाता है कार्य या कथन से पूर्व और उसमें कथनकार अपने मौलिक सर्जन या योग-दान के विषय में अपनी निजी भाव-भंगिमा को अभिव्यक्ति देता है। यह मैं क्यों लिख रहा हूं, क्यों कह रहा हूं? यह प्रश्न नहीं है, फिर भी प्रश्नार्थ को प्रश्नार्थ के रूप में निखारने के लिए, उनके असली -मूल रूप -स्वरूप को प्रकट-बिंबित करने के लिए शब्दों का आकलन करना पड़ता है। उसे नियति कहो या समय की मांग कहो, मगर यथार्थता या वास्तविकता यही है। " सभी आधार ले लो सांत्वना के, कुंआरी आरती की लौ बचेगी। "

अस्तित्व में मेरा आना एक चमत्कार है, "मिरेकल" है। आने के पीछे की बहुत-सी गुत्थियां हैं, स्थल-संकोच के कारण जिन्हें नहीं सुलझायी जा सकतीं। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है

कि समग्र अस्तित्व बेजोड़ है , अद्वितीय है , युनिक है और हर घटना अपने आप में एक विशेष स्थान रखती है । मेरा बचपन "लोन्लीनेस" में बीता और यौवन एकान्त में । भीड़ के साथ रहते हुए भी भीड़ का हिस्सा मैं कभी नहीं बना या कहिये मैंने नहीं बनने दिया स्वयं को । "आईने के सौ टुकड़े करके मैंने देखा है , मैं तब भी अकेला था , आज भी अकेला हूं । " पर इसे मैं अभिशाप नहीं , वरदान समझता हूं । सिर्फ इसके बदौलत ही मेरा मुझसे जुड़ाव , मेरा मुझसे अनुसंधान , स्वच्छंद और सहज रीति से हो सका है , यह खुशनसीबी क्या कम है ? और कितनों को नसीब है यह ?

शुरू के 15-16 साल के एकाकीपन ने मेरे जहन में एक संकल्प को — एक मनोभाव को दृढ़ किया । प्रतिकूल परिस्थितियों में भी , कांटों में पुष्प के मानिंद , हंसते रहने की शक्ति-प्रतिभा मालिक ने मुझे बख्शी । अस्तित्व-सागर में मैं "च्वोइसलेस" हो बहने लगा , उसकी मस्ती की तरंगों में तरंगायित होने लगा । मैं अनुभव कर रहा था कि मेरे भीतर एक निराकार आकार ले रहा है । इस मूल्यवान अनुभव ने मेरी ज़िन्दगी को "मल्टीडायमेन्शनल" बहुआयामी — निरायामी गठन देने का कार्य किया ।

तत्पश्चात् याने 17 से 37 तक की आयु में यौवन का सैलाब मेरे अंतस्थ चेतना-महासागर को विस्फोटित करता रहा । मैं कौन हूं ? मेरा वजूद क्या है ? बीज का टूटना , अंकुराना , वृक्ष होने की प्रक्रिया का अंग है । बूंद का मिटना xxxx सागरित होना है । इसी भांति मनुष्य का रूपांतरित होना , उस शून्य के लिए , उस अस्तित्व के लिए , यह भी एक महान घटना होती है किसी-किसी के जीवन में ।

मेरे अस्तित्व के चतुष्कोण को निर्मित किया — कमला मौसी , समबु , करुणा तथा मुदिता ने । पर केन्द्र में ओशो रहे । तब भी , अब भी ।

मौसी के कहने से परित्यक्ता समझू को अपनाया । पर समझू को चाहिए था एक आदमी जो व्यवहारू हो , समाज में जिसकी प्रतिष्ठा हो , जो समाज के दायरों को — नीति-नियमों को — बंधनों को मानता हो । मेरा जैसा संन्यासी , मस्त-कलंदर , खानाबदोश-फरन्दा कहां उसकी निगाहों के दायरे में रहनेवाला था ? उसे आपत्ति थी मेरे तौर-तरीकों पर , मेरे कपड़ों पर , मेरी इस तथाकथित असामाजिकता पर , मेरी शुद्ध-निर्मल-सहज धार्मिकता पर । अतः अलग हुए । होना ही था । तब मौसी के ही कहने पर कनक-करुणा को हास्टेल में दाखिल करवाया । उसके व्यक्तित्व -भवन की नींव बना । समझू एक भरी-पूरी औरत थी, करुणा एक लड़की थी । लड़की से युवती होने तक की प्रक्रिया का मैं साक्षी रहा हूं । वह मुझे अपने तरीकों से पाना चाहती थी , मैं उसे अपने तरीकों से रखना चाहता था । फलतः उसने अपना रास्ता अपनाया, मैंने अपना । मुदिता से भेंट प्रवास के दौरान हुई । एक सुशिक्षित एम. एस. सी. , एम. एड, एल. एल. बी — युनिवर्सिटी की डिग्रियों से लैस महिला । यहां भी संबंध होते-होते रह गया । उपर्युक्त चार महिलाओं में से तीन ने नकारात्मक ढंग से मेरे जीवन को गति दी । कमला मौसी से मां का प्यार मिला । ओशो की मस्ती का नशा जीवन को चलाता रहा ।

इन घटनाओं के समानान्तर मेरे भीतर एक विद्रोह पनप-पल रहा था । यह विद्रोह अनेक धरातलों पर था — धर्मगत , जातिगत, भाषागत , प्रदेशगत , व्यवस्थागत , शिक्षा की मुर्दा परंपराओं से, संस्कारगत मान्यताओं से , धर्म की रूढ़िगतता से । अस्तित्व के वृक्ष में प्रश्नों की नित्य-नवीन कोंपलें फूटने लगीं । मन विद्रोही सुरों में गाने लगा —

"मिटा दो इन्द्रधनुषी सेतु-वर्तुल , गगन की नीलिमा निर्मल खुलेगी
न कोई मार्गदर्शक है , दिशा है , न कोई पंथ है , पाथेय कोई
ठिकाने का न यात्री को पता है , नहीं उपयोगिता उद्देश्यकोई

"इट वाज़ वेरी चार्मिंग स्ट्रगल बीटविन सेल्फ एण्ड सेल्फ कोशंसनैस. नो डाउट आई लव इट आल्सो. इट इज़ सो चियरफुल टु रीमेम्बर एण्ड टु एक्सप्रेस." अतीत की जुगाली कई बार अच्छी लगती है, शांति के क्षणों में, ध्यान के क्षणों में।

ऊपर उल्लिखित सामाजिक आघातों से कदाचित मैं टूट जाता यदि मेरी अंतस्थ चैतन्य-राशिको सागर न मिलता। अलकनंदा गंगा बन गई। इस "पाथलैस पाथ" पर मुझे एक हमसफर, हमराही, हमनवां xxxxxxxx राहगीर मिल गया — ओशो के रूप में। वर्तमान में जीना, सजगता से जीना, तरलता से जीना, सचेतन जीना, अकेले जीना, समृद्ध एकांत में जीना, खुद में झुककर जीना, खुदको खोलकर जीना, स्वयं को खोकर जीना, डूबकर जीना यह सब सीखा इधर गुरु की अनुकंपा से। मैंने मेरे भीतर के दूसरे "व्यक्ति" को जन्म दिया। प्रसव का अनुभव नारी को होता है, इन अर्थों में मैं स्त्रैण-सा होता गया — बुद्ध-सा, बुद्ध-सा, कल्याण मित्र-सा अहिंसावादी हो गया।

"अकिंचन से नयन के एक तिल में
सिमट आकाश मंडल है समाया
नियति के द्वार पर चुप बैठ जाओ,
तुम्हें मंजिल स्वयं ही ढूंढ लेगी।"

मैं प्रबुद्ध चैतन्य, ओशो द्वारा प्रदत्त नाम, उर्फ प्रवीण पंड्या गुजरात के काठियावाड़ की पैदाइश। प्राथमिक शिक्षा उधर ही। सैकण्डरी के बाद यायावरी ज़िन्दगी। इस बेतरतीब ज़िन्दगी में कुछ तरतीब लाने की चेष्टा समझ और करुणा ने की, पर बेकार। मैं घुमन्तू था, घुमन्तू रहा। नौकरियां मिलती रहीं, करता रहा, छोड़ता रहा। आखिर बड़ौदा आना हुआ। यहां की नौकरी भी जाती रही। पर इधर-उधर के काम करते हुए महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी से हिन्दी विषय के साथ बी.ए. और एम.ए.

किया । एम.ए. में मेरा विशेषपत्र था — प्रबंध काव्य । प्रबन्ध-काव्य पढ़ते हुए डा. प्रेमलता बाफना से परिचय हुआ । डा. पारूकांत देसाई से मेरा परिचय बी.ए. के समय से था और मैं उनके काव्यमय व्यक्तित्व से पूर्णतया प्रभावित था । अतः मैंने उस समय तय कर लिया था कि भविष्य में यदि काम करूंगा तो उनके अन्तर्गत ही करूंगा । उसके लिए मुझे दो साल की प्रतीक्षा भी करनी पड़ी , क्योंकि म.स. युनि. के पी-एच.डी. पंजीकरण के नियमों के अनुसार एक मार्गदर्शक के अन्तर्गत कुछ निश्चित शोधार्थी ही काम कर सकते हैं और इस दृष्टि से डा. देसाई हिन्दी विभाग के व्यस्ततम निर्देशकों में परिगणित होते हैं ।

जब मैंने ओशो रजनीश पर कार्य करने की बात कही , तब उन्होंने बताया कि कोई और विषय ले लो — उपन्यास , नाटक , कहानी, कविता , प्रबंध काव्य — किसी पर भी । पर मैं अपने आग्रह पर डटा रहा । डा. देसाई की शिष्य-वत्सलता से उनके सभी विद्यार्थी परिचित हैं । वे एक प्रतिष्ठित अध्यापक हैं , इसमें दो मत नहीं हो सकते । पहले उन्होंने आचार्य रजनीश के कुछेक लेख पढ़े थे , परन्तु अब उन्होंने बाकायदा कुछ पुस्तकें मुझसे लीं और देख गये । तदुपरांत हम दोनों ने काफ़ी दिमागी क्वायद के बाद इस विषय को तय किया — "ओशो रजनीश का आधुनिक हिन्दी साहित्य में प्रदान " ।

डा. देसाई को मैं तो गुरु मानता हूं , पर वे मुझे कभी शिष्य के रूप में नहीं लेते , क्योंकि मैं उम्र में उनसे काफ़ी बड़ा हूं । पढ़ाई मेरा शौक है , आजीविका का साधन नहीं । इधर फिर मैं नौकरी से लग गया था और अब मैं निवृत्त भी हो गया हूं ।

हिन्दी साहित्य के अध्ययन के कारण निराला , प्रसाद , पंत , महादेवी वर्मा , आचार्य रामचन्द्र शुक्ल , नीरज , अज्ञेय , बच्चन , शिवानी, मन्नू भण्डारी , राहुल सांकृत्यायन , प्रेमचन्द आदि को पढ़ने का तो मौका मिला ही ; इधर गुजराती की अपनी जमीन से जुड़े रहने के

कारण मेघाणी , गोवर्द्धनराम त्रिपाठी , कलापी , कान्त , मणियार आदि से भी सत्व-रस लेता रहा । अपनी निजानंदी मस्ती के कारण गालिब , दाग , मोमिन , मजाज , जोश और अमृत घायल , शून्य पालनपुरी , आदिल , मरीज , चीनु मोदी , मनोज खंडेरिया , माधव रामानुज , रमेश पारेख , सुरेश जोशी , सुरेश दलाल , भगवतीकुमार शर्मा , नटवरलाल पंड्या "उशनस" , हरिश जोशी , विनोद जोशी , हेमंत धोरड़ा , दुला काग , कवुभाई गढ़वी , मेरामण गढ़वी जैसे उर्दू-गुजराती के कवियों-शायरों से काव्य-चषक पीता रहा । ओशो के अध्ययन ने दायरे को विस्तार दे दिया और चौसर , बायरन, शेक्सपियर , ज्यां पाल सार्त्र , कामू , काफ्का , पर्ल बक , नित्से , हैं हेमिंग्वे आदि से भी कुछ परिचित हुआ । फ्रायड , एडलर , युंग, लेनिन , मार्क्स , माओ , गांधी , डा. बाबासाहब अम्बेड़कर , महा-वीर , बुद्ध , कृष्ण आदि कइयों के सन्दर्भ ओशो-साहित्य में आते हैं । अतः उनका भी कुछ-कुछ आस्वाद मिला । अमृता ~~प्रxx~~ प्रीतम की सरित-प्रवाह शैली में कई डुबकियां लगायीं । " कई-कई लोग चलते हैं साथ मेरे " का अनुभव ओशो को पढ़ते समय बराबर होता रहता है । ओशो को पढ़ते समय सागर के किनारे होने का , या शिखर के नीचे होने का , या नदी के प्रवाह में तैरने का अहसास बराबर-बराबर होता रहता है । ओशो आपको आधुनिक विचार-प्रवाह और चिंतन के मुहाने पर लाकर खड़ा कर देते हैं ।

इधर आश्चर्य की एक बात और हुई है । ओशो की भौतिक मृत्यु के पश्चात् उनकी स्वीकार्यता § एक्सेप्टीबिलिटी § और भी बढ़ गई है । अंग्रेजी टेक्स्ट में उनके लेखन को रखा गया है । "धर्मयुग" तथा "हंस" जैसी पत्रिकाओं में उनके लेख आते हैं । गुजराती के मूर्धन्य आलोचक-कवि डा. सुरेश दलाल ने भी इधर एक पुस्तिका ओशो पर लिखी है । हिन्दी , गुजराती , अंग्रेजी , मराठी आदि भाषाओं के साहित्य में तथा दुनियाभर के लब्धप्रतिष्ठ लोगों में अब ओशो

की चर्चा होने लगी है । इतना ही नहीं , ओशो से प्रभावित साहित्य की एक अलग प्रवृत्ति ही विकसित हो रही है ।

ओशो-साहित्य तो मैं पढ़ ही रहा था , इधर इस कार्य के लिए , उसकी प्रविधि और प्रक्रिया से परिचित होने के लिए कुछ शोध-प्रबंधों को देख गया । और मेरा काम चल पड़ा ।

इस प्रबंध को तैयार करना बड़ा मुश्किल काम है । पानी को मुट्ठी में बांधना या हवा को पकड़ना संभव नहीं । कई आयाम हैं । कई पक्ष हैं । किसको लें , किसको छोड़ें । फिर कहूंगा कि यह बड़ा ही कठिन काम है , क्योंकि अभिव्यंजना को अभिव्यक्ति तक लाने में बहुत कुछ गुड़-गोबर हो जाता है ।

फिर भी यथा-शक्ति यथा-मति प्रयत्न किया है । प्रबंध को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है —

§1§ विषय-प्रवेश : ओशो का जीवन और व्यक्तित्व
§2§ ओशो रजनीश और हिन्दी साहित्य
§3§ ओशो साहित्य : एक विहंगम दृष्टिपात
§4§ ओशो रजनीश और हिन्दी संत-काव्य परंपरा
§5§ विविध विषयों पर ओशो के विचार
§6§ ओशो साहित्य : शिल्प एवं भाषिक-संरचना
§7§ उपसंहार

प्रथम अध्याय ओशो के जीवन को लेकर है । ओशो : बीसवीं शताब्दी का सर्वाधिक विवादास्पद एवं क्रांतिकारी व्यक्तित्व , बहुआयामी व्यक्तित्व , रंगारंग व्यक्तित्व , आनंदोत्सव का व्यक्तित्व । आज के युग के मसीहा , शब्दों के सौदागर , बातों के बनजारे , जीवन-स्वीकार-धर्म के उद्बोधक , अनोखे साज़ के साधक , इकहरे दृष्टांतों के बादशाह , लाखों की भीड़ में एकलवीर , व्यंग्य और हास्य के

अवतार , सरल और जटिल एक साथ ऐसे बहुआयामीय चुंबकीय व्यक्तित्व के धनी "चन्द्रमोहन रजनीश " जीवनकथा के लिए अच्छा विषय बन सकते हैं ।

शैशवकाल , रजनीश की स्कूली शिक्षा , माता-पिता तथा पारिवारिक सदस्यों के प्रति विद्रोहात्मक रवैया , विश्वविद्यालय के वर्ष , अध्यापन कार्य , बम्बई के वर्ष , पूना आश्रम के वर्ष , रजनीशपुरम् यु.एस.ए. का दौर , विश्व-भ्रमण और पर-देह-त्याग जैसे कतिपय मुद्दों के तहत उनके जीवन की कुछ रेखाओं को अंकित किया गया है । डा. सुरेश दलाल ने ओशो के संबंध में लिखा है -- " रजनीशजी विशिष्ट और विचित्र दोनों हैं । धार्मिक हैं , पर उनका कोई धर्म नहीं है ; आध्यात्मिक हैं पर अध्यात्म बिना के । अश्रद्धा बिना के नास्तिक और श्रद्धा बिना के आस्तिक । हकार और नकार के , पोजिटीव और नेगेटीव के अंतिम छोरों पर हैं । रागी हैं और वैरागी नहीं हैं । वे विहार, विलास और विकास के पक्षधर हैं । फाइव-स्टार प्रकार के आश्रम के हैं , कुटिर के नहीं । अतएव गांधी उन्हें नहीं रास आ सकते । वे खामोशी के नहीं , आक्रोश के हैं ; शांति के नहीं , क्रांति के हैं । विवादास्पद हैं , पर हास्यास्पद नहीं । विवाद जीवन्त का हो सकता है , मुर्दे का नहीं । वे श्रीमंतों एवं धीमंतों के हैं । कच्चे पारद जैसे । पचा सको तो ठीक , अन्यथा रोम-रोम पर फूट निकल सकते हैं । वे अच्छे वाचक हैं , भावक हैं , प्रभावक हैं , वक्ता हैं । " सु एपलटन ने एक पुस्तक लिखी है , जिसमें उन्होंने ओशो के लिए कहा है -- " ईसा मसीह के पश्चात् सर्वाधिक विद्रोही व्यक्ति । "

दूसरे अध्याय में उनके कृतृत्व और साहित्य को लेकर चर्चा का दौर चला है । एक समय था जब बहुत से लोग रजनीश के कृतित्व को साहित्य के अन्तर्गत मानने को तैयार नहीं थे । परंतु अब धीरे-धीरे उनके प्रवचनों और व्याख्यानों से लेखों और ग्रन्थों का निर्माण हो रहा है और उसके आधार पर उनके साहित्य का मूल्यांकन हो रहा है ।

ओशो के कृतित्व को हिन्दी साहित्य में लेने या न लेने से उनका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है। यथार्थ स्थिति तो यह है कि ओशो के साहित्य को हिन्दी में लेने से हिन्दी साहित्य का भंडार ही समृद्ध होगा।

अस्तु, इस अध्याय में साहित्य के स्वरूप की विवेचना करते हुए हिन्दी के विविध लेखकों एवं कवियों के अभिमतों की चर्चा की गई है कि ओशो के साहित्य का हिन्दी में क्या महत्व है, याकि उनका हिन्दी साहित्य में क्या योगदान है।

तीसरे अध्याय में ओशो-साहित्य पर एक विहंगम दृष्टिपात किया गया है। यह एक विशाल-विराट समुद्र के किनारे की टहल मात्र है। ओशो ने अपने जीवन-काल में हजारों व्याख्यान दिए हैं। जीवन, धर्म, मनुष्य, सभ्यता, संस्कृति, इतिहास, पुराण, साहित्य, कला, बुद्ध, महावीर, ईसा, राम, कृष्ण, लाओत्से, कान्फुशियस, जरथुस्त्र, खलिल जिब्रान, कबीर, सरहपा; रहीम, रैदास, मलूक, सहजो, दया, पल्टू, जगजीवनदास, रज्जब, वाजिद, विज्ञान, आधुनिक जीवन की अनेक समस्याओं आदि पर कई-कई ढंग से कई-कई बातें कही हैं ओशो ने। विश्वभर में उनके ग्रन्थों की संख्या तकरीबन 750 हैं। उनमें से कुछ ग्रन्थों को लेकर केवल यहाँ सामान्य परिचय-सा दिया गया है, केवल चखाया भर है। उन ग्रन्थों में निम्नलिखित मुख्य हैं — सुनो भाई साधो, ॐ मणि पद्मे हुम्, पतंजलि: योग-सूत्र, समुंद समाना बुंद में, महावीर: परिचय और वाणी, ध्यानयोग §प्रथम और अंतिम मुक्ति§, घाट भुलाना बाट बिनु, तत्त्वमसि, भारत के जलते प्रश्न: स्वर्ण पाखी जो था कभी और अब है भिखारी जगत का, संभोग से समाधि की ओर, शिक्षा में क्रान्ति, कृष्ण-स्मृति, ईशावास्योपनिषद, चरैवेति-चरैवेति। इनके अतिरिक्त भिन्न-भिन्न विषयों पर जो ओशो-साहित्य उपलब्ध है उसका संकेत भी यहाँ दिया गया है जिनमें निम्नलिखित मुख्य हैं: उपनिषदों पर ओशो साहित्य,

कृष्ण , महावीर और बुद्ध पर ओशो साहित्य ; लाओत्से , अष्टावक्र , झेन साधु तथा सूफियों पर ओशो साहित्य ; ध्यान, साधना, योग तथा तंत्र पर ओशो साहित्य ; राष्ट्रीय तथा सामाजिक समस्याओं पर ओशो साहित्य ; साधना-शिविरों का साहित्य ; प्रश्नोत्तर साहित्य ; हिन्दी के संत कवियों पर ओशो-साहित्य ।

चौथे अध्याय में ओशो रजनीश का एक और ही रूप हमें मिलता है । ओशो ने और कुछ न लिखा होता या कहा होता , तो भी इतने मात्र से वे हिन्दी के एक मूर्धन्य साहित्यकार हो सकते थे । हिन्दी की निर्गुण काव्यधारा पर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी , आचार्य परशुराम चतुर्वेदी तथा अन्य अनेक विद्वानों ने कई दृष्टियों से विचार किया है ; परंतु ओशो ने कबीर , दादू , रैदास , पल्टू , दयाबाई, सहजोबाई , मलूक , जगजीवनदास , रहीम , खुसरो , मीरां आदि संत कवियों , भक्तों तथा सूफी संतों पर जो कहा है वह कई दृष्टियों से अनूठा है । इस अध्याय में हम ओशो के इस आलोचक रूप को देखते हैं ।

यह अनेक बार कहा गया है कि जीवन और जगत के अनेक विषयों पर ओशो ने जो विचार व्यक्त किए हैं ; उनमें एक प्रकार की नवीनता है , स्फूर्तता है , ताजगी है , एक नया दृष्टिकोण है । इस पांचवे अध्याय मेंऐसे कई विषयों की चर्चा है जिन पर ओशो रजनीश ने नये ढंग से , आधुनिक ढंग से विचार किया है । धर्म , धार्मिकता , आध्यात्मिकता , भगवत्ता , राजनीति , मनोविज्ञान , गांधी , डा॰ अम्बेडकर , नेहरू , चर्चिल , हिटलर , माओ , मार्क्स , महावीर , जैन धर्म , बुद्ध , बौद्ध धर्म , झेन साधु सूफी संत , निराकार-साकार चर्चा , देश की गरीबी की समस्या , आबादी की समस्या, भाषा समस्या , काम की समस्या , प्रेम और विवाह , विवाह और सेक्स , नारी-चेतना , दलित-चेतना , शिक्षा-समस्या , नारी

और मातृत्व , अध्यापकों की समस्या , शिक्षक कैसा होना चाहिए जैसे देश के अनेक सामयिक विषयों पर ओशो ने अपने मौलिक विचारों को रखा है । यहां एक उदाहरण द्रष्टव्य है । कभी किसीने कहा कि डा. राधाकृष्णन एक शिक्षक से राष्ट्रपति के पद पर पहुँचे इसमें शिक्षक का गौरव है ; आचार्यजी ने तत्काल कहा कि ऐसा नहीं है । प्रत्येक महान पुरुष छोटे-छोटे पदों पर रहते हुए ही आगे बढ़ता है , हां यदि कोई राष्ट्रपति पुनः अध्यापक बने तब उस पद को गौरव प्राप्त होता है । यह तो केवल एक उदाहरण हैं । ऐसे तो अनेकों उदाहरण मिलते हैं , जहां उन्होंने गतानुगतिकता को चुनौती दी है । यह उनकी विशेषता है कि वे किसी भी बात को एक नये अन्दाज़ से देखते हैं । भीड़ का अंग नहीं बनते । इस अध्याय में इस तरह के विचारों की व्याख्या का उपक्रम है ।

ओशो शब्दों के जादूगर हैं । भाषा के क्रीयेटर है । शब्दों के मर्म को पकड़ते हैं । उनका गद्य कई बार गद्यकाव्य की सीमाओं को स्पर्श करता है । छठे अध्याय में ओशो-साहित्य के शिल्प एवं भाषा-पक्ष पर विचार किया गया है । शिल्प के संबंध में कविता, गद्यकाव्य, लघुकथा , समालोचना , लेख , निबंध , संस्मरण , पत्र , साक्षात्कार, बोधकथा आदि स्वबंधों पर विचार हुआ है । भाषिक-संरचना के अन्तर्गत शब्द-विचार, सरलता, काव्यात्मकता, प्रतीकात्मकता, तार्किकता, व्यंग्यात्मकता , हास्य-प्रधानता , दृष्टांत-शैली , व्यास-शैली, समास-शैली , विश्लेषणात्मक शैली , धारा-शैली प्रभृति भाषा-कर्म की नाना छटाओं का विवेचन किया गया है । जब विचार सूत्रात्मक स्वरूप धारण करते हैं , तब सूक्ति का जन्म होता है । कल्पना की समाहार शक्ति और भाषा की समास-शक्ति का यहां पता चलता है । प्रस्तुत अध्याय में ओशो-साहित्य में प्रयुक्त सूक्तियों पर भी विचार किया गया है ।

अंतिम अध्याय उपसंहार का है । इसमें समूचे प्रबंध का समग्रावलोकन

प्रस्तुत करते हुए विषय के महत्व का निरूपण किया गया है । इसकी कुछ उपलब्धियों को रेखांकित करने का यत्न भी यहाँ हुआ है । अपनी सीमाओं और मर्यादाओं के स्वीकार के साथ इस दिशा में और क्या हो सकता है उसका कुछ निर्देश देने की चेष्टा की गई है ।

जहाँ तक संभव हो अध्याय के अंत में आवश्यक निष्कर्षों को दिया गया है । प्रबंध के अंत भाग में "संदर्भिका" के अन्तर्गत कुछ परिशिष्टों को दिया गया है, जिनमें उपजीव्य-ग्रन्थों की सूची, सहायक-ग्रन्थों की सूची {हिन्दी-गुजराती}, सहायक-ग्रन्थों की सूची {अंग्रेजी}, समग्र ओशो साहित्य की एक विहंगम सूची तथा पत्र-पत्रिकाओं की सूची को प्रस्तुत करने का उपक्रम रहा है ।

प्रकृति बेशक बेशर्त अपना प्रेम लुटाती है, और यही प्रकृति अस्तित्व का एक अद्वितीय तत्व है । अस्तित्व सागर -सा है । सागर में लहरें उठती हैं और विलीन होती हैं । ये लहरें परत-दर-परत जमी हुई होती हैं । ठीक वैसे ही शरीर का एक आयाम होता है, उससे सूक्ष्म मन आलोकित होता है और उससे भी सूक्ष्मतम चेतना का जगत है — "कोस्मोस" । शरीर के तल पर जो उठता है, वह निम्न कोटि का जीवन जीता है । उसे पशु कहेंगे, प्राणी कहेंगे । इन सबसे ऊपर उठकर मनुष्य को रूपांतरित होना होगा । तब वह स्वयं अस्तित्व का एक अंग हो जायेगा, अस्तित्व हो जायेगा, शून्य हो जायेगा, सागर में विलीन हो जायेगा । और तब संसार की प्रत्येक घटना को वह साक्षी-भाव से विलोक सकेगा । ओशो और क्या है ?

अंततः इस समूची प्रक्रिया में मेरे साथ मेरे निर्देशक डा. पारूकांत देसाई के धैर्य एवं तितिक्षा की भी परीक्षा हुई है । नौकरी के कारण मुझे द्वितीय एवं चतुर्थ शनिवार या इतवार का ही समय मिलता था । मैं कालेज नहीं जा पाता था, अतः हम दोनों सयाजीबाग {कमाठी-बाग} में बेण्ड-स्टेण्ड के पास मिलते थे । अपने शोध-छात्रों के पीछे

इतना समय देना , उनकी सुविधा-असुविधा का ध्यान रखना , यह डा. देसाई ही कर सकते हैं । मैं जानता हूं कि अपने खुद के बारे में वे बहुत ही लापरवाह हैं । वे "अंकों के नहीं , शब्दों के आदमी हैं ।" उनकी ज्ञान-निष्ठा और विषय-प्रतिश्रुतता उदाहरणीय समझी जा सकती है । इस प्रबंध में कई स्थानों पर उनकी कुछेक काव्य-पंक्तियों को मैंने उद्धृत किया है , जिससे उनके व्यक्तित्व का एक और आयाम प्रकट हुआ है , जो ओशो जैसे विषयों पर काम करने के लिए [illegible] आवश्यक ही नहीं , अपितु अनिवार्य है । इस अवसर पर मैं उनका तहेदिल से आभार व्यक्त करता हूं । इनके अतिरिक्त डा. पी.सी. शर्मा § अहमदाबाद§ , डा. सी.एल. प्रभात §बम्बई§ प्रभृति हिन्दी के वरिष्ठ प्रोफेसरों का भी मैं आभारी हूं ।

रजनीश सेण्टर के कर्मचारी , ओशो सेण्टर बंबई-पूना-बड़ौदा के कर्मचारी , ओशो और डा. अम्बेडकर के लेखक अधिवक्ता संदेश भालेकर , स्वामी चैतन्य कीर्ति , स्वामी आनंद वितराग §रवि-शंकर § , महाराजा उदयभानुसिंह §पोरबंदर§ , डा. शिरीष पुरो-हित , डा. सुरेश दलाल , स्व. डा. सुरेश जोशी , डा. सुभाष दवे , डा. नापावटी § अंग्रेजी विभाग § , डा. प्रेमलता बाफना , डा. ए.के. गोस्वामी , स्वामी अग्निवेश , सुश्री करुणा पुरोहित कनक§ , सुश्री नीला दाणी , सुश्री भगवती गधात्रा , सुश्री कमलाबेन सोरठिया § कमला मौसी§ , सुश्री मुदिता प्रभृति के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं जिन्होंने सकारात्मक या नकारात्मक ढंग से मेरे अस्तित्व को इस मकाम पर पहुंचाया है ।

अंत में "बड़ी मां " § श्रीमती कमलादेवी§ के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं जिन्होंने मुझे कई बार चाय,नास्ता या खाना दिया है और जिन्होंने हमारे कई विवादों को साक्षीभाव

से सुना है , निबहाया है ।

अंत में अपनी शक्ति और सीमाओं के साथ यह प्रबंध प्रस्तुत है । इससे अध्येताओं को यत्किंचित भी लाभ पहुंचा तो मैं अपने श्रम को सार्थक समझूंगा । अंत में प्रसादजी की इन पंक्तियों के साथ विरमता हूं —
"इस पथ का उद्देश्य नहीं है , श्रान्त भवन में टिक रहना ; किन्तु पहुंचना उस सीमा तक जिसके आगे राह नहीं । "

तथा और भी —

"उड़ा दो धूल सारे दर्शनों की
अलक्षित दृष्टि ही केवल रहेगी ;
बना है बादलों का शामियाना
थिरकती है उमंगों की जवानी । "

दिनांक : 11-9-97

विनीत ,
[signature]
§ प्रदीप एच. पंड्या §